अथर्ववेद की विषयवस्तु

(Contents of Atharvaveda)

अथर्ववेद के सूक्तों की सही प्रकृति का अनुमान उसकी विषयवस्तु के विश्लेषण से सहज में लगाया जा सकता है। विषयवस्तु की दृष्टि से अथर्ववेद के सूक्तों का विभाजन भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से किया है। पं० बलदेव उपाध्याय ने "वैदिक साहित्य और संस्कृति" के अन्तर्गत अथर्ववेद के सूक्तों को अध्यात्म, अधिभूत और आधिदैवत, इन तीन भागों में विभक्त किया है। विन्टरनिट्ज़ महोदय ने अथर्ववेद संहिता की विषय वस्तु का विभाजन भैषजानि, आयुष्यसूक्त, पौष्टिकसूक्त, संज्ञानसूक्त, प्रायश्चित्तानि, स्त्रीकर्माणि, अभिचारकाणि, राजकर्माणि आदि के रूप में किया है।[1]

वैसे तो उपर्युक्त विद्वानों द्वारा किये गये वर्गीकरण अथर्ववेद की समस्त सामग्री को आच्छादित कर लेते हैं, परन्तु फिर भी स्पष्टतर एवं विशदतर विश्लेषण के द्वारा अथर्ववेद के वर्ण्यविषय का मूल्याङ्कन सही-सही हो सकता है। इस दृष्टिकोण से अथर्ववेद की विषयवस्तु का विभाजन भी निम्न पद्धति से किया जा सकता है—

१-रोग निवारण मन्त्र, स्तोत्र तथा औषधियां

अथर्ववेदसंहिता में अधिकांश मन्त्र तथा स्तोत्र रोगनिवारण के लिए हैं। इस प्रकार के मन्त्रों को भैषजानि कहा जाता है। इन मन्त्रों के अन्तर्गत या तो स्वयं रोग को ही सम्बोधित किया गया है और या फिर इन मन्त्रों के

---

१. अथर्ववेद संहिता ५।२२

सम्बोध्य रोगों को लाने वाले दैत्य हैं। अन्य आदिम धर्मों की तरह भारत में भी यह विश्वास था कि पिशाच लोग या तो व्यक्ति को चोर, कुष्ठ आदि के रूप में यातना देते हैं या व्यक्ति के अन्तर में प्रविष्ट होकर उसे रोगी बना देते हैं। अथर्ववेद के इन मन्त्रों में रोगनिवारक औषधि की स्तुति की गई है। जल में अनेक रोगों को दूर करने की शक्ति होने के कारण, कुछ मन्त्रों में जल की स्तुति भी की गई है। अग्नि पिशाचों के अपसारण में सर्वाधिक समर्थ है। इसीलिए अथर्ववेद के बहुत से मन्त्रों में अग्नि से रोगमुक्ति की प्रार्थना की गई है। इन मन्त्रों में सम्बन्धित रोगों के लक्षण भी दे दिये गये हैं। अधिकाँश सूक्त, ज्वर लाने वाले 'तक्मा', को सम्बोधित किये गये हैं।[1] इसके अतिरिक्त कुष्ठरोग, पीलिया, जलोदर, गंज, अस्थिभङ्ग क्षत, वीर्यक्षीणता, सर्पदशन एवं विषमूर्च्छा आदि विविध रोगों के निवारण के मन्त्र हैं।

अथर्ववेद के अन्तर्गत ज्वर का विशद रूप से वर्णन किया गया है। इस संहिता में ज्वर का वर्णन रोगों के राजा के रूप में किया गया है। अथर्ववेद संहिता के अन्तर्गत व्रण[2] एवं छालों से भरी देह का भी वर्णन किया गया है।[3] कीड़ों से उत्पन्न होने वाले रोग प्रायः सभी देशों में पाये जाते हैं। इस संहिता में इनके नष्ट करने का भी वर्णन किया गया है।[4] इसके अतिरिक्त इन कीड़ों के नर और मादा के मरने का वर्णन भी इस संहिता के अन्तर्गत किया गया है। नर-मादा की यही कल्पना जर्मन-लोककविता के अन्तर्गत भी मिलती है।

प्रेतात्माओं को तो इस संहिता में बीमारी की जड़ ही कहा गया है। परन्तु प्रेतों से मुक्ति पाने के लिये 'अजाश्रृङ्गी' नामक एक सुगन्धित बूटी के प्रयोग का वर्णन भी वहाँ उपलब्ध है।[5] इस प्रकार अथर्ववेद के अन्तर्गत विभिन्न रोगनिवारण करने वाले मन्त्रों एवं औषधियों का वर्णन स्पष्ट रूप से मिलता है।

---

१. अथर्ववेद १।१७,

२. अथर्ववेद ६।२५

३. अथर्ववेद २।३१

४. अथर्ववेद ५।३२

५. त्वया वयमप्सरसो गन्धर्वाश्चातयामहे।
   अजश्रृङ्ग्यज रक्षः सर्वान् गन्धेननाशय।।
   अथर्ववेद संहिता ४।३७।२ तथा देखिये—
   अथर्ववेद संहिता ४।३७; ३, ४, ७, ११, १२

स्वास्थ्य तथा दीर्घ जीवन की प्रार्थनायें

अथर्ववेद संहिता के कुछ सूक्तों के मन्त्र स्वास्थ्य तथा दीर्घ आयु के लिए की जाने वाली प्रार्थनाओं के रूप में हैं। इन्हें 'आयुष्याणि' कहा गया है। रोग निवारण करने वाले मन्त्रों एवं इन मन्त्रों में बहुत थोड़ा भेद है। इन मन्त्रों का विनियोग विशेषतः पारिवारिक उत्सवों, उपनयन एवं गोदान आदि के अवसरों पर किया जाता होगा। इन मन्त्रों के अन्तर्गत बहुत काल तक जीने की प्रार्थना की गई हैं, जैसे—

'मा पुरः जरयः मृथाः। परंतु मृत्यु रमृतं न एतु'॥

इसके अतिरिक्त इस संहिता के अन्तर्गत १०१ प्रकार की मृत्युओं से रक्षा की तथा किसी भी प्रकार के रोग से मुक्त रहने की प्रार्थना भी की गई है। इस प्रकार के मन्त्रों में प्रायः सामरूप अनुभव होता है। अथर्ववेद के १७ वें काण्ड का ३० मन्त्रों का एक पूरा सूक्त इसी प्रकार का है। जिस प्रकार रोग निवारण मन्त्रों में 'औषधि' की स्तुति की गई है, उसी प्रकार इन मन्त्रों में स्वास्थ्य को बनाये रखने तथा अधिक दिनों तक जीवित रखने के प्रभाव से युक्त ताबीज़ जैसे रक्षा सूत्रों की स्तुति गाई हैं।

आशीर्वादात्मक मन्त्र

'आयुष्याणि' से अत्यधिक मिले-जुले आशीर्वादात्मक मन्त्र भी अथर्ववेद में प्रचुरता से मिलते हैं। इन्हें भारतीय परम्परा में 'पौष्टिकानि' कहा जाता है। इन मन्त्रों में कृषक, ग्वाले एवं व्यापारी अपने-अपने व्यवसाय में सफलता एवं समृद्धि प्राप्त करने की आशा व्यक्त करते हैं। इसके साथ ही साथ खेत की जुताई के समय की शुभकामनायें, अन्न के बोने, बढ़ने तथा उगाने के लिए प्रार्थनायें, खेती को हानि पहुँचाने वाले कीटाणुओं के विनाश की प्रार्थनायें, वर्षा के कराने के यातवी मन्त्र, हिंस्र पशुओं तथा तस्करों से रक्षा के मन्त्र, द्यूत में जीतने के ऐन्द्रजालिक मन्त्र तथा नव-गृहनिर्माण के समय पढ़े जाने वाले जादू मन्त्र भी आ जाते हैं। उदाहरणार्थ हम यहां वर्षा कराने के मन्त्र को उद्धृत कर रहे हैं—

समुत्पतन्तु प्रदिशो नभस्वतीः समभ्राणि वातजूतानि यन्तु ।
महऋषभस्य नदतो नभस्वतो वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु ॥"[1]

प्रायश्चित्त मन्त्र

आयुष्याणि से मिलते-जुलते कुछ ऐसे सूक्त हैं, जिनमें किये हुये पापों का प्रायश्चित्त किया गया है। इस प्रकार के सूक्तों को 'प्रायश्चित्तानि' कहा जाता है। जिन पापों का प्रायश्चित्त इन सूक्तों में किया गया है: वे भाग नैतिक नहीं हैं। उनमें अनेक पाप, अपूर्ण रूप से विहित यज्ञों से उत्पन्न हुए हैं। कुछ अनजाने में हुये अपराध, कुछ 'ऋण न चुका सकने से उत्पन्न' अपराध और कुछ अनुचित विवाह सम्बन्ध से उत्पन्न पाप हैं।

शान्तिस्थापना मन्त्र

अथर्ववेद में कुछ ऐसे मन्त्र भी हैं, जिनका लक्ष्य शान्ति स्थापित रखना है। परिवार में यदि कोई कलह या भेद होता था तो वह किसी दुरात्मा के ऐन्द्रजालिक प्रभाव से उत्पन्न माना जाता था। अतः इस प्रकार के कलह और मतभेद के निवारण के लिये तथा शान्ति स्थापित करने के लिए अथर्ववेद में अनेक सूक्त हैं, जिनके मन्त्रों में जादू जैसा प्रभाव है। स्वामी के रोष को शान्त करने तथा समाज में अधिक प्रभाव प्राप्त करने के मन्त्र भी इसी कोटि में आते हैं, ऐसे सूक्तों को 'संज्ञानसूक्तानि' कहा जाता है।

विवाह और प्रेम सम्बन्धी जादूमन्त्र

अब तक जिस प्रकार के सूक्तों का उल्लेख किया गया वे 'अथर्व' भाग से सम्बद्ध हैं। इसके अतिरिक्त ऐसे सूक्त भी तो अथर्ववेद के अन्तर्गत वर्तमान हैं, जिन्हें 'अङ्गिरस' भाग से सम्बद्ध कहा जा सकता है। विवाह और प्रेम सम्बन्धी जादू मन्त्र ऐसे ही सूक्तों में वर्तमान हैं। इनमें कुछ तो ऐसे मन्त्र हैं, जिनके द्वारा एक स्त्री अथवा पुरुष बिना हानि पहुँचाए पवित्र भावना से अभीष्ट पति अथवा पत्नी को पाने का प्रयत्न करता है। विवाह के पश्चात् सुखी दाम्पत्य जीवन गर्भरक्षण एवं पुत्र जन्मादि के लिए भी शुभकामनायें

---

१. अथर्ववेद संहिता ४।१५।१

ऐसे मन्त्रों में उपलब्ध हैं। अथर्ववेद संहिता के १४वें काण्ड के समस्त सूक्तों में इसी प्रकार के मन्त्र संगृहीत हैं।

उपर्युक्त मन्त्रों के अतिरिक्त दूसरे प्रकार के मन्त्र वे हैं जिनमें पत्नी पति के विद्वेषभाव को शान्त करने के लिए शान्ति-मन्त्रों का पाठ करती है। इसी प्रकार पति भी विश्वासघातिनी पत्नी का पुनः प्रेम पात्र बनाने के लिये मन्त्रों का उपयोग करता है। अथर्ववेद में प्रेमी प्रेयसी के यहां रात को चुपके से पहुँच जाता है और कहता है कि तुम्हारी माता नींद में सोती रहे, तुम्हारे पिता, गृह के अन्य वृद्ध निद्रालीन हों। कुत्ते की भी आंख न खुलने पाये और तुम्हारे सगे-सम्बन्धी अभी नहीं उठें।[१] इस उदाहरण के अन्तर्गत प्रेमी की स्थिति का वर्णन बड़ा सजीव है।

प्रेमप्राप्ति का उपाय

किसी स्त्री के प्रेम को प्राप्त करने का उपाय भी अथर्ववेद के अन्तर्गत उपलब्ध है।[२] अथर्ववेद के अनुसार यदि कोई पुरुष किसी स्त्री का प्रेम प्राप्त करना चाहता है तो उसके लिये एक सरल उपाय है और वह यह कि वह प्रेयसी की एक मृत्तिका की मूर्ति को बनाये। इसके साथ ही साथ प्रेमाभिलाषी व्यक्ति पोस्त के रेशों से धनुष की डोरी बनाकर, फूलों से भरी डालियों का एक धनुष बनाकर, तीर में एक कांटे का सिर लगाकर, उल्लू के पंख से तीर के पिछले भाग को सजाकर और काली लकड़ी की एक कमान बना ले। इस तीर कमान से प्रेम पिपासु को उस प्रेयसी की मूर्ति के हृदय को बींधना आरम्भ कर देना चाहिये। इससे यह तात्पर्य निकाला जाता था कि प्रेमी अपनी प्रेयसी के हृदय को कामबिद्ध तथा परवश कर रहा है और अब वह निश्चय ही उसे (प्रेमी को) प्राप्त हो जाएगी।

उपर्युक्त प्रकार के ही द्वारा स्त्री भी पुरुष के प्रेम को प्राप्त करने का प्रयत्न करती थी। अन्तर यही है कि प्रेमाभिलाषी पुरुष स्त्री की मूर्त्ति बनाता था और पुरुष प्रेम की अभिलाषिणी स्त्री पुरुष की मूर्ति का निर्माण

---

१. विशेष देखिये—अथर्ववेद ३।२५, १-५, ६

२. स्वप्तु माता स्वप्तु पिता स्वप्तु श्वा स्वप्तु विश्पतिः।
स्वपन्त्वस्यै सातयः स्वपत्वयमभितो जनः ॥

—अथर्ववेद संहिता, ४।५।६

करती थी। अथर्ववेद के अन्तर्गत स्त्रीप्रेम की पशुता का तीव्र रूप उस स्थिति में दिखाई पड़ता था, जब स्त्री का उद्देश्य केवल अपने प्रतिपक्षियों और सपत्नियों का विनाश होता है। (अथर्ववेद संहिता १।१४।१-४) इस पशुता की चरम सीमा उस समय दिखलाई पड़ती है जब स्त्री को बन्ध्या बनाने के लिये इन अभिशापमन्त्रों का प्रयोग किया जाता है।[1] इसी प्रकार अथर्ववेद के मन्त्रों में पुरुष की जननेन्द्रिय के विनाश करने के प्रयोग का विधान भी मिलता है।[2]

उपर्युक्त प्रकार के सभी सूक्तों को "स्त्रीकर्माणि" कहा जाता है।

पिशाचों, यातुधानों एवं दुरात्माओं से रक्षा एव उनके विनाश से सम्बन्धित मन्त्र

अथर्ववेद के अङ्गिरस वाले भाग में कतिपय ऐसे सूक्त आते हैं, जिनमें पिशाच, पिशाचनियों-प्रेतात्माओं और दुरात्माओं के हुये प्रभाव के प्रतीकार वाले मन्त्र हैं। इन्हें "अभिचाराणि" कहा जाता है। उस समय यह अन्धविश्वास प्रचलित था कि रोग दैत्यों, दानवों और राक्षसों के ही कोप का फल है। इसीलिये व्रण जैसे रोगों के लिये भी उपर्युक्त प्रकार के मन्त्रों का प्रयोग किया जाता था। किन मन्त्रों के द्वारा ऐन्द्रजालिक शत्रु ऐन्द्रजालिक को परेशान कर सकता है और किन मन्त्रों के द्वारा इस दुष्प्रभाव का निवारण किया जा सकता है—वे सब मन्त्र इन सूक्तों में साथ-साथ दे दिये गए हैं।

अथर्ववेद के अन्तर्गत अभिशाप को मूर्तिमती दानवी के रूप में भी चित्रित किया गया है।[3]

राजविषयक मन्त्र

अथर्ववेद संहिता में कुछ सूक्त ऐसे हैं, जिनके मन्त्र राजविषयक हैं। इस प्रकार के सूक्तों को 'राजकर्माणि' कहा जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीनकाल में भारत में प्रत्येक राजा का एक राज-पुरोहित होता था

---

१. अथर्ववेदसंहिता ७।३५

२. अथर्ववेदसंहिता ६।१३८, ७।६

३. अथर्ववेद संहिता ६।३७।२

जो राजकर्मों में प्रवीण होने के साथ-साथ इन्द्रजाल एवं मन्त्र-तन्त्र का भी ज्ञाता होता था। इन सूक्तों के अन्तर्गत ऐसे ही पुरोहितों के जादू मन्त्र हैं। इनमें राजा के शत्रुओं के लिए तो अभिचारमन्त्र हैं और स्वयं राजा के लिए शुभकामनायें हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे मन्त्र हैं, जो राजा के अभिषेक के समय पढ़े जाते होंगे। कुछ ऐसे मन्त्र भी हैं, जिनमें शत्रु को पराजित करने की बात कही गई है और कुछ ऐसे मन्त्र हैं, जो राजा की शक्ति और यश को सूचित करते हैं। कतिपय ऐसे मन्त्र भी हैं, जिनमें राजा में जोश लाने का प्रभाव है। इन सब मन्त्रों में एक विशेष प्रकार का ऐन्द्रजालिक प्रभाव होता है। इस प्रकार के सूक्तों में 'समर गीत' अत्यधिक मनोहर हैं, जिनमें योद्धाओं को लड़ने और शत्रुओं को पराजित करने के लिए ललकारा गया है—

वृषेव यूथे सहसा विदानो गव्यन्नभि रुव सन्धनाजित। शुचा विध्य हृदयं परेषां हित्वा ग्रामान् प्रच्युता यन्तु शत्रव: ॥[1]

(अथर्ववेद ५।२०।३।)

इस प्रकार के सूक्तों में दुन्दुभिसूक्त भी अत्यधिक उत्तेजनात्मक हैं एक मन्त्र देखिये—

यथा श्येनात् पतत्रिण, संविजन्ते अहर्दिवि सिंहस्य स्तनथोर्यथा। एवा त्व दुन्दुभेऽमित्रानभिक्रन्द प्रत्रासयाथो चित्तानि मोहय ॥[2]

ब्राह्मणविषयकसूक्त

अथर्ववेद के ऐन्द्रजालिक सूक्तों में कतिपय सूक्त ऐसे भी मिलते हैं, जिनमें पुरोहितों के अधिकारों और शक्तियों का उल्लेख है। इन सूक्तों में पुरोहितों की आज्ञा की अनुल्लङ्घनीयता का दृढ़ता से प्रतिपादन किया गया है और जिनमें उनके जीवन तथा सम्पत्ति पर व्याघात करने वाले के लिए होने वाले भयङ्कर परिणामों एवं अभिशापों का उल्लेख भी किया गया है। कुछ सूक्तों में दक्षिणा का महत्त्व भी वर्णित हुआ है। दक्षिणा न देकर पुरोहितों को कष्ट देना घोरतम पाप है और दक्षिणा देकर पुरोहितों को प्रसन्न करना सर्वोच्च पुण्य है। अप्रसन्न ब्राह्मण अपने जादू मन्त्रों से किसी का कौन सा अनिष्ट नहीं कर सकता। कतिपय सूक्त ऐसे भी हैं, जिनके मन्त्रों में बुद्धि,

---

१. देखिए अथर्ववेद, पांचवें मण्डल का २०वाँ तथा २१वाँ सूक्त

२. अथर्ववेद ५।२१।६

यश और ज्ञान (कर्मकाण्डीय तथा इतर ज्ञान) की चर्चा हुई है। इन पुरोहित विषयक सूक्तों को प्राचीन लोक-काव्य के रूप में कदापि नहीं माना जा सकता। ये तो निश्चय ही पुरोहितों की रचनायें प्रतीत होती हैं, जो अथर्ववेदसंहिता में बाद को जोड़ दी गई हैं।

याज्ञिक ऐन्द्रजालिक मन्त्र

ऋग्वेद के यज्ञीय सूक्तों के समान अथर्ववेद संहिता में भी कतिपय यज्ञीय ऐन्द्रजालिक सूक्त मिलते हैं, जिन्हें देखकर मैक्डोनल महोदय लिखते हैं—

"It is impossible to draw a distinct line of demarcation between sacrifice and sorcery in Vedic Religition, of which witch-craft is an essential element.

इस प्रकार मैक्डोनल महोदय के कथनानुसार वैदिक धर्म के अन्तर्गत, जिसका जादू टोना प्रमुख तत्त्व है, यज्ञ एवं इन्द्रजाल के बीच भेद की रेखा खींचना असम्भव है।

यजुर्वेद की ही तरह इन सूक्तों में कुछ गद्यात्मक स्तोत्रों का भी सद्भाव है। १८वें काण्ड के समस्त सूक्तों में यज्ञीय ऐन्द्रजालिक मन्त्र ही हैं, जिनमें मुख्य रूप से अन्त्येष्टि और पितरों की पूजा से सम्बन्धित मन्त्र अधिक हैं। बीसवें काण्ड के समस्त सूक्त सोमयज्ञ से सम्बन्धित हैं, जो 'कुन्तापसूक्त' के अतिरिक्त ऋग्वेद से ही लिये हुये हैं। ऐसे सूक्तों में कुछ मन्त्र 'प्रहेलिकाओं और उनके उत्तरों के रूप में हैं, कई दिन तक चलने वाले यज्ञों के अवसर पर पुरोहित लोग इसी प्रकार की प्रहेलिकाओं द्वारा अपना मन भी बहलाते रहे होंगे। विन्टरनिट्ज़ महोदय का विचार है कि अथर्ववेदसंहिता में इस प्रकार के सूक्तों का संग्रह सम्भवतः इसलिए किया होगा कि अन्य तीन वेदों के समान यज्ञ से सम्बद्ध होकर यह मन्त्रसंग्रह (अथर्ववेद) भी 'वेद' कहलाने का अधिकारी हो जाए।[1]

दार्शनिक सूक्त

इन्द्रजालपरक सूक्तों के साथ-साथ अथर्ववेदसंहिता में कतिपय दार्शनिक सूक्त भी उपलब्ध होते हैं। विन्टरनिट्ज़ महोदय का विचार है कि वहां दार्शनिक सूक्तों का उपयोग इन्द्रजाल की दृष्टि से है जो बहुत अस्वा-

---

१. Macdonall. A Histary of Sankrit Literature, page 191.
Winternitz, Indian Literature, Vol. 1, Page 148.

भाविक एवं अधिक अर्वाचीन है। यों तो इन सूक्तों में सृष्टि आदि के सम्बन्ध में कतिपय उच्च विचार भी मिलते हैं। उदाहरण के लिए, उन्नीसवें मण्डल के ५३वें और ५४वें सूक्त में काल को सृष्टि का मूल कारण माना गया है। इस सम्बन्ध में यहां निम्नलिखित मन्त्र को उद्धृत करना अप्रासङ्गिक न होगा।

कालो तपः काले ज्येष्ठं काले ब्रह्म समाहितम्। कालो ह सर्वस्येश्वरो यः पितासीत् प्रजापतेः ॥ अथर्ववेद १९।५३।८

अर्थात् काल ही तप है, काल ज्येष्ठ है, काल में ही ब्रह्म प्रतिष्ठित है। काल सभी का पिता और प्रजापति है।

इसी प्रकार के अनेक मन्त्र अथर्ववेद के अन्तर्गत उपलब्ध होते हैं। १९वें काण्ड के ५४वें सूक्त में विविध वस्तुओं की एक सूची प्रस्तुत की गई है। सम्भवतः इन वस्तुओं का निर्माता भी काल ही है। इस प्रकार के वर्णनों की दार्शनिकता के सम्बन्ध में यद्यपि अनेक विद्वानों को सन्देह है, परन्तु कुछ भी हो इतना तो निश्चित ही है कि ये सूक्त पूर्णरूप से दार्शनिकता से शून्य नहीं कहे जा सकते। इन सूक्तों में जो सृष्टिसम्बन्धी एवं अन्य दार्शनिक विचार मिलते हैं, वे भी ऋग्वेदसंहिता से प्रादुर्भूत एवं उपनिषदों में पुष्पित एवं पल्लवित दार्शनिक विचारश्रृंखला की ही एक कड़ी है। यह बात दूसरी है कि कालक्रम की दृष्टि से उनका महत्त्व अधिक नहीं है।

उपर्युक्त दार्शनिक विचारधाराओं के अतिरिक्त अथर्ववेद के रहस्यात्मक विचारों में भी दार्शनिकता की झलक देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए, अथर्ववेद के ८वें अध्याय के रोहित सूक्तों में अत्यधिक रहस्यात्मकता के दर्शन होते हैं। प्रथम सूक्त के ही अन्तर्गत रोहित अर्थात् उदित होते हुए सूर्य की लालिमा को, सृष्टि का मूल तत्त्व बतलाया गया है। रोहित को ही द्यावा पृथिवी का स्रष्टा बतलाया गया है और रोहित की ही शक्ति पृथ्वी और आकाश को अपने-अपने स्थान पर संभाले हुये है। तेरहवें काण्ड के तृतीय सूक्त में रोहित परम देव के रूप में भी स्तुत हुए हैं। इसी प्रकार रोहित का वर्णन अथर्ववेद के अन्तर्गत वृष[1] और गौ[2] की सर्वोच्च सत्ता के रूप में भी किया गया है। इस प्रकार के वर्णनों के सम्बन्ध में हमारा विचार है कि ये वर्णन रहस्यात्मक होते हुये भी विशुद्ध रूप से दार्शनिक नहीं कहे जा सकते।

---

१. अथर्ववेद ४।११

२. अथर्ववेद १।१०